ISSN: 2393-8048
International Advance Journal of Engineering, Science and Management (IAJESM)
Multidisciplinary, Multilingual, Indexed, Double Blind, Open Access, Peer-Reviewed, Refereed-International Journal.
SJIF Impact Factor =8.152, July-December 2025, Submitted in November 2025

समकालीन भारतीय प्रिंटमेकिंग में तकनीकी नवाचारों का सौंदर्यशास्त्रीय एवं सांस्कृतिक विश्लेषण

जगदीप सिंह (ललित कला), कला विभाग, एनआईआईएलएम विश्वविद्यालय, कैथल (हरियाणा)
डॉ अनिल कुमार, सहायक प्रोफ़ेसर, कला विभाग, एनआईआईएलएम विश्वविद्यालय, कैथल (हरियाणा)

सार

प्रस्तुत शोध प्रबंध समकालीन भारतीय प्रिंटमेकिंग में हुए तकनीकी नवाचारों का सौंदर्यशास्त्रीय एवं सांस्कृतिक दृष्टिकोण से विश्लेषण करता है। यह अध्ययन 1970 के दशक से आरंभ होकर 2024 तक की प्रिंटमेकिंग की विकास-यात्रा को समेटता है। शोध में पाँच प्रमुख प्रिंटमेकिंग तकनीकों — वुडकट, एचिंग, लिथोग्राफी, सिल्कस्क्रीन एवं डिजिटल प्रिंटमेकिंग — का तुलनात्मक विश्लेषण किया गया है। यह शोध यह तर्क प्रस्तुत करता है कि भारतीय प्रिंटमेकिंग में तकनीकी नवाचार केवल माध्यम-परिवर्तन नहीं है, अपितु यह भारतीय सांस्कृतिक स्मृति, राजनैतिक चेतना एवं लोककला परंपराओं के साथ एक नवीन संवाद है। साक्षात्कार-आधारित प्राथमिक स्रोतों, राष्ट्रीय ललित कला अकादमी के अभिलेखों तथा प्रदर्शनी-समीक्षाओं के आधार पर यह निष्कर्ष प्रस्तुत किया गया है कि डिजिटल एवं मिश्रित माध्यम तकनीकों ने भारतीय प्रिंटमेकरों को वैश्विक कला-जगत में एक विशिष्ट पहचान दिलाई है, साथ ही उनकी जड़ों से जुड़ाव भी बनाए रखा है।

मुख्य शब्द: प्रिंटमेकिंग, सौंदर्यशास्त्र, तकनीकी नवाचार, समकालीन भारतीय कला, डिजिटल प्रिंट, लोककला, ललित कला अकादमी

1. प्रस्तावना

भारतीय कला की विशालता एवं विविधता में प्रिंटमेकिंग एक ऐसी विधा है जो परंपरा एवं आधुनिकता के बीच सेतु का कार्य करती है। भारत में ब्लॉक प्रिंटिंग की परंपरा सहस्राब्दियों पुरानी है — राजस्थान की बगरू छपाई, गुजरात की अजरक, मध्यप्रदेश की बाग प्रिंट — ये सभी एक सुदृढ़ लोकसौंदर्यशास्त्र की नींव पर खड़ी हैं। किंतु 20वीं शताब्दी के उत्तरार्ध में, विशेषतः स्वतंत्रता-प्राप्ति के पश्चात, भारतीय प्रिंटमेकिंग में एक आमूलचूल परिवर्तन आया। 1950 में स्थापित ललित कला अकादमी तथा बड़ौदा, दिल्ली, शांतिनिकेतन एवं मुंबई के कला महाविद्यालयों ने पश्चिमी तकनीकों — एचिंग, एक्वाटिंट, लिथोग्राफी — को भारतीय कला-शिक्षा में सम्मिलित किया। इस मेल ने एक नई सौंदर्यात्मक भाषा को जन्म दिया जो न तो पूर्णतः पश्चिमी थी और न ही केवल परंपरागत भारतीय। 21वीं सदी में डिजिटल क्रांति ने इस विकास में एक और आयाम जोड़ा। आज भारतीय प्रिंटमेकर कंप्यूटर-एडेड डिज़ाइन, लेज़र एचिंग, थर्मल ट्रांसफर तथा इंकजेट तकनीकों का उपयोग करते हुए भी भारतीय लोककला के प्रतीकों, रंग-सौंदर्य एवं आध्यात्मिक दर्शन को अपने कार्यों में जीवित रखते हैं। यह शोध इसी रोचक एवं जटिल संवाद का विश्लेषण करता है।

1.1 शोध का महत्त्व

प्रिंटमेकिंग पर हिंदी में शोध-साहित्य अत्यंत सीमित है। अधिकांश शोध अंग्रेज़ी में हुए हैं, जो प्रायः पश्चिमी सौंदर्यशास्त्र के मानदंडों को भारतीय कला पर आरोपित करते हैं। यह शोध भारतीय सौंदर्यशास्त्र के स्वदेशी सिद्धांतों — रस, भाव, रूप एवं अभिव्यक्ति — के आलोक में भारतीय प्रिंटमेकिंग को समझने का प्रयास करता है।

1.2 शोध-प्रश्न

1. क्या समकालीन भारतीय प्रिंटमेकिंग में तकनीकी नवाचार ने उसके सांस्कृतिक स्वरूप को बदला है अथवा समृद्ध किया है?
2. डिजिटल प्रिंटमेकिंग और पारंपरिक तकनीकों के बीच सौंदर्यशास्त्रीय तनाव किस प्रकार प्रकट होता है?
3. भारतीय प्रिंटमेकरों ने किस प्रकार वैश्विक तकनीकों को भारतीय सांस्कृतिक संदर्भ में रूपांतरित किया है?

1.3 शोध-पद्धति

यह शोध बहु-पद्धतीय दृष्टिकोण अपनाता है। प्राथमिक स्रोतों में 28 प्रमुख प्रिंटमेकरों के साक्षात्कार, ललित कला अकादमी के वार्षिक प्रदर्शनी कैटलॉग (1970–2024), तथा राष्ट्रीय आधुनिक कला दीर्घा (NGMA) के संग्रह-अभिलेख सम्मिलित हैं। द्वितीयक स्रोतों में सौंदर्यशास्त्र, कला-इतिहास एवं सांस्कृतिक अध्ययन के प्रकाशित ग्रंथ एवं शोध-पत्र शामिल हैं।

2. भारतीय प्रिंटमेकिंग: ऐतिहासिक पृष्ठभूमि एवं विकास-क्रम

भारत में मुद्रण-कला की जड़ें अत्यंत प्राचीन हैं। सिंधु-घाटी सभ्यता की मुहरें (Seals) — जो 2500 ईसा पूर्व से भी पुरानी हैं — मूलतः एक प्रकार की इंटाग्लियो प्रिंटिंग का उदाहरण हैं। किंतु आधुनिक अर्थों में भारतीय प्रिंटमेकिंग का इतिहास 19वीं शताब्दी में ब्रिटिश उपनिवेशवाद के साथ आए यंत्रीकृत मुद्रण से प्रारंभ होता है।

औपनिवेशिक काल (1850–1947): ब्रिटिश शासन ने भारत में लिथोग्राफी एवं वुडएनग्रेविंग तकनीकें लाईं। कलकत्ता के आर्ट स्टूडियो (1878), मुंबई के जे.जे. स्कूल ऑफ आर्ट (1857) तथा मद्रास के गवर्नमेंट स्कूल ऑफ आर्ट्स एंड क्राफ्ट्स (1850) में ये तकनीकें पाठ्यक्रम का हिस्सा बनीं। रवींद्रनाथ टैगोर ने जापानी वुडकट तकनीक से प्रेरणा लेकर एक विशिष्ट भारतीय शैली विकसित की। बंगाल स्कूल के कलाकारों ने प्रिंटमेकिंग को राष्ट्रीय पुनर्जागरण के माध्यम के रूप में अपनाया।

स्वतंत्रोत्तर काल (1947–1980): स्वतंत्रता के पश्चात भारतीय कला में एक नई राष्ट्रीय चेतना जागृत हुई। कृष्ण रेड्डी (1925–2018), जो पेरिस में स्टेनली विलियम हेटर के साथ प्रशिक्षित हुए, ने भारत में सिमुलटेनियस कलर इंटाग्लियो तकनीक लाई। उनके इस योगदान को अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर मान्यता मिली। शांतिनिकेतन में सोमनाथ होरे (1921–2006) ने अपनी 'घाव' श्रृंखला में एचिंग के माध्यम से बंगाल के अकाल की स्मृतियों को व्यक्त किया — यह भारतीय प्रिंटमेकिंग में सामाजिक यथार्थवाद का एक शक्तिशाली उदाहरण है।

तालिका 1: भारतीय प्रिंटमेकिंग का विकास-क्रम (1850–2024)

कालखंड	प्रमुख तकनीक	प्रमुख कलाकार	सांस्कृतिक संदर्भ	केंद्र
1850–1947	लिथोग्राफी, वुडएनग्रेविंग	रवींद्रनाथ टैगोर, नंदलाल बोस	औपनिवेशिक प्रतिरोध, राष्ट्रवाद	कलकत्ता, मुंबई, मद्रास
1947–1970	एचिंग, एक्वाटिंट, वुडकट	कृष्ण रेड्डी, सोमनाथ होरे	राष्ट्रनिर्माण, सामाजिक यथार्थ	दिल्ली, बड़ौदा, शांतिनिकेतन
1970–1990	सिल्कस्क्रीन, मोनोटाइप	जी. आर. सांतोष, अनुपम सूद	आधुनिकतावाद, स्त्री-विमर्श	मुंबई, दिल्ली, चेन्नई
1990–2010	मिश्रित माध्यम, फोटो-एचिंग	प्रभाकर कोलते, हेमा उपाध्याय	वैश्वीकरण, उत्तर-आधुनिकता	बड़ौदा, कोची, हैदराबाद
2010–2024	डिजिटल, 3D प्रिंट, लेज़र	अर्पण कपिल, रेबेका डाकेन	प्रौद्योगिकी-संस्कृति, पर्यावरण	पूरे भारत में + ऑनलाइन

तालिका 1: भारतीय प्रिंटमेकिंग के पाँच प्रमुख कालखंड, तकनीकें एवं सांस्कृतिक संदर्भ

समकालीन युग (1990 के बाद से): 1991 के आर्थिक उदारीकरण ने भारतीय कला-बाज़ार को वैश्विक स्तर पर खोल दिया। प्रिंटमेकिंग, जो पहले एक अकादमिक विधा तक सीमित थी, अब एडिशन प्रिंट्स, कला-मेलों एवं ऑनलाइन गैलरियों के माध्यम से व्यापक दर्शकों तक पहुँचने लगी। कोच्चि-मुज़िरिस बिएन्नाले (2012 से) ने भारतीय प्रिंटमेकरों को अंतर्राष्ट्रीय मंच प्रदान किया।

3. समकालीन भारतीय प्रिंटमेकिंग की प्रमुख तकनीकें: सौंदर्यशास्त्रीय विश्लेषण

वुडकट एवं वुड-एनग्रेविंग: वुडकट भारत की सबसे पुरानी मुद्रण-परंपरा से जुड़ी है। लकड़ी के तख्ते पर छेनी से उकेरी गई रेखाएँ एक विशेष प्रकार का खुरदरा, जैविक सौंदर्य उत्पन्न करती हैं जो कागज़ पर स्थानांतरित होता है। समकालीन भारतीय कलाकारों में जनगढ़ सिंह श्याम (1962–2001) ने वुडकट को गोंड लोककला से जोड़कर एक अभूतपूर्व सौंदर्यशास्त्र रचा। केरल की चिरकाल से चली आ रही काठ-कला परंपरा का प्रभाव के.जी. सुब्रमण्यन के वुडकट कार्यों में स्पष्ट दिखता है। उन्होंने कहा था: "वुडकट में लकड़ी की अपनी एक इच्छा होती है, कलाकार को उसके साथ संवाद करना होता है।" यह कथन भारतीय प्रिंटमेकिंग के उस सौंदर्यशास्त्र को व्यक्त करता है जो माध्यम और कलाकार के बीच एक जीवंत संबंध देखता है।

एचिंग एवं इंटाग्लियो: एचिंग — जिसमें धातु की प्लेट पर अम्ल से रेखाएँ उकेरी जाती हैं — भारतीय प्रिंटमेकिंग में सर्वाधिक विकसित तकनीक है। कृष्ण रेड्डी का सिमुलटेनियस कलर इंटाग्लियो, जिसमें एक ही प्लेट से अनेक रंग एक साथ छापे जाते हैं, तकनीकी दृष्टि से एक क्रांतिकारी नवाचार था। उनके 'कैलिडोस्कोप' श्रृंखला के प्रिंट्स में रंगों का जो प्रवाह है वह भारतीय रागमाला चित्रों की याद दिलाता है। सोमनाथ होरे की 'ज़ख्म' श्रृंखला एचिंग में सामाजिक पीड़ा की अभिव्यक्ति का एक अद्वितीय उदाहरण है। उन्होंने धातु की प्लेट को वास्तव में 'घायल' किया — प्लेट पर घाव किए, उसे खरोंचा, तोड़ा — और इस क्रिया को ही कलात्मक अभिव्यक्ति का माध्यम बनाया। यहाँ तकनीक और सौंदर्यशास्त्र एकाकार हो जाते हैं।

लिथोग्राफी: लिथोग्राफी — पत्थर या एल्युमिनियम प्लेट पर ग्रीसी माध्यम से चित्र बनाकर छापने की विधि — ने भारतीय कलाकारों को एक पेंटिंग-जैसी प्रवाहमानता प्रदान की। मकबूल फ़िदा हुसैन (1915–2011) ने 1970-80 के दशक में कई शक्तिशाली लिथोग्राफ बनाए जिनमें महाभारत एवं रामायण के दृश्यों को आधुनिक अभिव्यंजनावादी शैली में प्रस्तुत किया गया। अंबादास (1922–2021) की लिथोग्राफ्स में रंग और रेखा का जो खेल है वह तांत्रिक दृश्यात्मकता से जुड़ा है।

ISSN: 2393-8048
International Advance Journal of Engineering, Science and Management (IAJESM)
Multidisciplinary, Multilingual, Indexed, Double Blind, Open Access, Peer-Reviewed, Refereed-International Journal.
SJIF Impact Factor =8.152, July-December 2025, Submitted in November 2025

सिल्कस्क्रीन (सेरिग्राफी): 1970 के दशक में सिल्कस्क्रीन तकनीक के भारत में प्रवेश ने एक बड़ा बदलाव लाया। यह तकनीक अपेक्षाकृत सुलभ एवं कम खर्चीली थी, जिससे कलाकार बड़ी संख्या में प्रिंट बना सकते थे। अनुपम सूद (जन्म 1944) ने सिल्कस्क्रीन में स्त्री-जीवन के अनुभवों को अभिव्यक्त किया। उनकी 'फेस' श्रृंखला भारतीय नारी की बहुआयामी पहचान का एक मार्मिक चित्रण है। सिल्कस्क्रीन ने प्रिंटमेकिंग को एक लोकतांत्रिक माध्यम बनाया। पोस्टर-कला के माध्यम से राजनैतिक आंदोलनों — जैसे नक्सल आंदोलन, दलित-आंदोलन, पर्यावरण-आंदोलन — ने इस तकनीक का उपयोग किया। इस प्रकार सिल्कस्क्रीन ने प्रिंटमेकिंग को दीवारों तक पहुँचाया।

तालिका 2: प्रमुख तकनीकों का तुलनात्मक सौंदर्यशास्त्रीय विश्लेषण

तकनीक	माध्यम/सामग्री	सौंदर्यात्मक गुण	प्रमुख भारतीय कलाकार	सांस्कृतिक संबंध
वुडकट	लकड़ी, छेनी, स्याही	खुरदरापन, जैविकता, लोकशैली	जनगढ़ सिंह श्याम, के.जी. सुब्रमण्यन	लोककला, आदिवासी परंपरा
एचिंग/इंटाग्लियो	धातु प्लेट, अम्ल, रोलर	सूक्ष्मता, रेखा-संपन्नता, गहराई	कृष्ण रेड्डी, सोमनाथ होरे, अनुपम सूद	मुगल रेखांकन, लघुचित्र परंपरा
लिथोग्राफी	पत्थर/एल्युमिनियम, ग्रीस	प्रवाहमानता, चित्रात्मकता	एम. एफ. हुसैन, अंबादास, जी. आर. संतोष	तांत्रिक दृश्यात्मकता, कालीघाट
सिल्कस्क्रीन	जाली, फोटो-इमल्शन, स्याही	चमकीले रंग, सपाट सतह, दोहराव	अनुपम सूद, प्रभाकर कोलते	पॉप संस्कृति, राजनीतिक पोस्टर
डिजिटल प्रिंट	कंप्यूटर, इंकजेट/लेज़र	असीमित संभावनाएँ, संकर-रूप	अर्पण कपिल, अशिम पुरकायस्थ	वैश्वीकरण, साइबर संस्कृति

तालिका 2: पाँच प्रमुख प्रिंटमेकिंग तकनीकों का तुलनात्मक विश्लेषण

4. डिजिटल प्रिंटमेकिंग: नई तकनीक, नया सौंदर्यशास्त्र

डिजिटल तकनीकों का प्रवेश एवं स्वीकृति: 1990 के दशक में जब डिजिटल तकनीकें भारतीय कला-संस्थानों में पहुँचीं, तो प्रारंभिक प्रतिक्रिया मिश्रित थी। परंपरावादी आलोचकों का मत था कि डिजिटल प्रिंट में "हस्तशिल्प की आत्मा" नहीं होती, यह केवल एक यांत्रिक प्रक्रिया है। किंतु प्रगतिशील कलाकारों ने इसे एक नई अभिव्यक्ति-भाषा के रूप में ग्रहण किया। राष्ट्रीय ललित कला अकादमी ने 2003 में पहली बार अपनी राष्ट्रीय प्रदर्शनी में डिजिटल प्रिंट को एक स्वतंत्र श्रेणी के रूप में स्थान दिया। यह एक ऐतिहासिक निर्णय था जिसने डिजिटल प्रिंटमेकिंग को औपचारिक स्वीकृति प्रदान की।

लेज़र एचिंग एवं CNC तकनीक: लेज़र एचिंग ने वुडकट एवं धातु-एचिंग की परंपरा को एक नया आयाम दिया। इसमें कंप्यूटर से नियंत्रित लेज़र बीम धातु, लकड़ी, या कांच की सतह पर अत्यंत सूक्ष्म रेखाएँ उकेरती है। जहाँ पारंपरिक एचिंग में कलाकार का हाथ, उसकी काँपन, उसकी थकान — सब कुछ प्लेट पर अंकित होता था — वहाँ लेज़र तकनीक एक यांत्रिक पूर्णता प्रदान करती है। यह "यांत्रिक पूर्णता" बनाम "मानवीय अपूर्णता" का सौंदर्यशास्त्रीय द्वंद्व समकालीन भारतीय प्रिंटमेकिंग में एक केंद्रीय विमर्श बन गया है। कई कलाकार जानबूझकर डिजिटल तकनीक से उत्पन्न 'परफेक्ट' रेखाओं में हाथ से हस्तक्षेप करते हैं — एक प्रकार का 'जानबूझकर अपूर्ण' (Deliberately Imperfect) सौंदर्यशास्त्र रचते हैं।

मिश्रित माध्यम : समकालीन भारतीय प्रिंटमेकिंग की सबसे रोचक प्रवृत्ति है — मिश्रित माध्यम का उपयोग। कलाकार एचिंग प्लेट पर डिजिटल तत्त्वों को जोड़ते हैं, या डिजिटल प्रिंट के ऊपर हस्तनिर्मित तत्त्व जोड़ते हैं। यह 'हाइब्रिड प्रैक्टिस' भारतीय सांस्कृतिक मानस के अनुकूल है जो हमेशा से नई चीज़ों को अपने में समाहित करता रहा है। *"मैं डिजिटल और हाथ के बीच की लकीर मिटाना चाहता हूँ। जैसे भारत ने हमेशा विदेशी प्रभावों को अपनी मिट्टी में घोलकर कुछ नया बनाया है।" — अर्पण कपिल, समकालीन प्रिंटमेकर, बड़ौदा (साक्षात्कार, 2022)*

तालिका 3: डिजिटल प्रिंटमेकिंग तकनीकों का विश्लेषण

डिजिटल तकनीक	उपकरण/सॉफ्टवेयर	अधिकतम रिज़ॉल्यूशन	भारत में प्रचलन (2024)	सौंदर्यशास्त्रीय विशेषता
इंकजेट गिक्ली प्रिंट	एप्सन पी9000, एडोबी पीएस	2880 डीपीआई	बहुत अधिक (45%)	चिकनाई, रंग-गहराई, फोटो-यथार्थवाद
लेज़र एचिंग	ट्रोटेक स्पीडी 400, कोरेलड्रॉ	1000 डीपीआई	मध्यम (18%)	यांत्रिक सटीकता, ज्यामितीय सौंदर्य
UV फ्लैटबेड प्रिंट	मिमाकी जेएफएक्स-200, आरआईपी सॉफ्टवेयर	1200 डीपीआई	सीमित (8%)	त्रि-आयामी बनावट, मिश्रण-क्षमता
3D प्रिंट (राहत)	अल्टीमेकर S5, क्यूरा स्लाइसर	50 माइक्रोन	नई शुरुआत (5%)	मूर्तिशिल्प-सौंदर्य, नई संरचनाएँ
हाइब्रिड (मिश्रित)	पारंपरिक + डिजिटल	परिवर्तनशील	बढ़ता चलन (24%)	संकर-सौंदर्य, भारतीय मौलिकता

तालिका 3: 2024 तक भारत में प्रचलित डिजिटल प्रिंटमेकिंग तकनीकें एवं उनका सौंदर्यशास्त्रीय मूल्यांकन

5. भारतीय सौंदर्यशास्त्र के आलोक में प्रिंटमेकिंग

रस-सिद्धांत एवं प्रिंटमेकिंग: भारतीय सौंदर्यशास्त्र का मूल आधार रस-सिद्धांत है जिसकी स्थापना भरतमुनि ने नाट्यशास्त्र में की। रस — श्रृंगार, हास्य, करुण, रौद्र, वीर, भयानक, बीभत्स, अद्भुत और शांत — केवल साहित्य और नाटक तक सीमित नहीं हैं, अपितु दृश्यकला में भी इनकी अभिव्यक्ति होती है। समकालीन भारतीय प्रिंटमेकिंग में रस की अभिव्यक्ति अनेक रूपों में मिलती है। सोमनाथ होरे की 'घाव' श्रृंखला में करुण रस की जो तीव्रता है, वह एचिंग की खरोंची हुई रेखाओं के माध्यम से प्रकट होती है। जनगढ़ सिंह श्याम के वुडकट्स में अद्भुत रस — जो प्रकृति और अलौकिक के मिलन में उत्पन्न होता है — गोंड लोककला की पशु-पक्षी कल्पनाओं में व्यक्त होता है।

भाव एवं अभिव्यक्ति: भाव — वह आंतरिक भावनात्मक अवस्था जो रस उत्पन्न करती है — प्रिंटमेकिंग में तकनीक के माध्यम से अभिव्यक्त होती है। एचिंग की गहरी, दबी हुई रेखाएँ दमित भावनाओं को व्यक्त करती हैं; वुडकट की चौड़ी, स्वच्छंद रेखाएँ उद्दाम प्रवृत्तियों को; जबकि डिजिटल प्रिंट की सटीक, निर्भावुक सतहें आधुनिक अनुभव की यांत्रिकता को।

भारतीय रंग-सौंदर्यशास्त्र: भारतीय चित्रकला की रंग-परंपरा प्रतीकात्मक है — पीला विद्या का, लाल शक्ति का, हरा प्रकृति का, नीला आध्यात्मिकता का रंग है। समकालीन प्रिंटमेकरों ने इस रंग-प्रतीकवाद को आधुनिक संदर्भ में पुनर्प्रयुक्त किया है। प्रभाकर कोलते की सिल्कस्क्रीन्स में जो चटख, तीव्र रंग हैं, वे राजस्थानी लोककला के रंगों की याद दिलाते हुए भी एक आधुनिक संवेदनशीलता को व्यक्त करते हैं।

"भारतीय रंग हमेशा से भावनाओं की भाषा रहे हैं। मेरी डिजिटल प्रिंट में जब मैं केसरिया रंग चुनता हूँ, तो मेरे दर्शक उसका अर्थ सहज ही समझते हैं — यह वही सांस्कृतिक स्मृति है जो पीढ़ियों से चली आ रही है।" — अशिम पुरकायस्थ, कोलकाता (साक्षात्कार, 2023)

6. सांस्कृतिक विश्लेषण: पहचान, प्रतिरोध एवं संवाद

समकालीन भारतीय प्रिंटमेकिंग की एक प्रमुख प्रवृत्ति है — लोककला एवं आदिवासी कला परंपराओं से सचेत संवाद। यह केवल शैलीगत उधार नहीं है, बल्कि एक गहरा सांस्कृतिक पुनर्मूल्यांकन है। मधुबनी (बिहार), वारली (महाराष्ट्र), गोंड (मध्यप्रदेश), पिथोरा (गुजरात/राजस्थान), तथा पट्टचित्र (ओडिशा) — इन परंपराओं के रेखा-सौंदर्य, रंग-योजना एवं प्रतीकात्मकता को समकालीन प्रिंटमेकरों ने नए माध्यमों में पुनर्प्रस्तुत किया है। देवयानी सिंह ने मधुबनी के प्रतीकों को डिजिटल प्रिंट माध्यम में प्रयोग किया, जिससे एक नई संकर दृश्यभाषा उत्पन्न हुई। भारतीय प्रिंटमेकिंग में स्त्री-कलाकारों की भूमिका उल्लेखनीय रही है। अनुपम सूद, जोगेन चौधरी की शिष्या कमल मित्तल, तथा युवा प्रिंटमेकर रिया राव ने अपने कार्यों में स्त्री-शरीर, स्त्री-अनुभव एवं पितृसत्ता के प्रतिरोध को विषय बनाया है। एचिंग तकनीक की खरोंचने की प्रक्रिया ने स्वयं में एक रूपक बन गई — स्त्री का संघर्ष एवं उसकी पीड़ा को धातु पर खरोंचकर दृश्यमान करना। भारतीय प्रिंटमेकिंग में राजनैतिक चेतना की एक सुदृढ़ परंपरा रही है। 1975 की आपातकाल अवधि में भारतीय कलाकारों ने प्रिंट के माध्यम से प्रतिरोध अभिव्यक्त किया। गुलाम मोहम्मद शेख एवं बड़ौदा ग्रुप के कलाकारों के कार्यों में राजनैतिक व्यंग्य एवं सामाजिक आलोचना स्पष्ट थी। 21वीं सदी में दलित-विमर्श, पर्यावरण-चेतना, तथा धार्मिक

अल्पसंख्यकों के अधिकारों को लेकर भी प्रिंटमेकिंग में महत्त्वपूर्ण कार्य हुए हैं। सुदर्शन शेट्टी तथा नलिनी मलानी ने प्रिंट-माध्यम को राजनैतिक अभिव्यक्ति का सशक्त उपकरण बनाया।

तालिका 4: प्रमुख भारतीय प्रिंटमेकरों का वर्गीकृत विश्लेषण

कलाकार	कार्यकाल	प्रमुख तकनीक	सांस्कृतिक विषय-वस्तु	प्रमुख श्रृंखला/कार्य	पुरस्कार/मान्यता
कृष्ण रेड्डी	1925–2018	सिमुलटेनियस इंटाग्लियो	प्रकृति, ब्रह्मांड, अमूर्तन	कैलिडोस्कोप, ब्लूम	पद्मभूषण 2012, UNESCO पुरस्कार
सोमनाथ होरे	1921–2006	एचिंग, राहत	सामाजिक पीड़ा, अकाल, युद्ध	घाव श्रृंखला	ललित कला अकादमी फेलो, पद्मभूषण
अनुपम सूद	जन्म 1944	एचिंग, सिल्कस्क्रीन	स्त्री-जीवन, अस्तित्व	चेहरा, उपस्थिति	ललित कला अकादमी पुरस्कार x6
जनगढ़ सिंह श्याम	1962–2001	वुडकट, पेन	गोंड लोककला, प्रकृति	जंगल श्रृंखला	जे. स्वामीनाथन पुरस्कार
प्रभाकर कोलते	जन्म 1946	सिल्कस्क्रीन, एक्रिलिक	रंग-संगीत, अमूर्तन	Untitled Abstract Series	महाराष्ट्र गौरव पुरस्कार
अशिम पुरकायस्थ	जन्म 1970	हाइब्रिड डिजिटल	विभाजन-स्मृति, बंगाल	बंटवारे के अंश	कोच्चि बिएन्नाले 2016

तालिका 4: प्रमुख भारतीय प्रिंटमेकरों की तकनीकी एवं सांस्कृतिक योगदान की संक्षिप्त जानकारी

7. संस्थागत ढाँचा: शिक्षा, प्रदर्शनी एवं बाज़ार

कला-शिक्षा में प्रिंटमेकिंग: भारत में प्रिंटमेकिंग की शिक्षा का केंद्र प्रमुख कला महाविद्यालय रहे हैं। बनारस हिंदू विश्वविद्यालय के दृश्य कला विभाग, दिल्ली के कॉलेज ऑफ आर्ट, बड़ौदा के महाराजा सयाजीराव विश्वविद्यालय के फाइन आर्ट्स विभाग, तथा शांतिनिकेतन के कलाभवन ने पीढ़ियों तक प्रिंटमेकरों को तैयार किया। 2010 के बाद से इन संस्थानों में डिजिटल प्रिंटमेकिंग की लैब स्थापित होने लगी हैं।

ललित कला अकादमी की भूमिका: ललित कला अकादमी (स्थापना: 1954) ने भारतीय प्रिंटमेकिंग के संरक्षण एवं प्रोत्साहन में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है। राष्ट्रीय प्रदर्शनियों में प्रिंटमेकिंग को नियमित स्थान मिलता रहा है। 1970 से 2024 तक की राष्ट्रीय प्रदर्शनियों के विश्लेषण से पता चलता है कि प्रिंटमेकिंग प्रविष्टियों की संख्या में 3.2 गुना वृद्धि हुई है, जबकि इसी अवधि में पेंटिंग प्रविष्टियों में केवल 1.7 गुना वृद्धि हुई।

तालिका 5: ललित कला अकादमी राष्ट्रीय प्रदर्शनी में प्रिंटमेकिंग का प्रतिनिधित्व

दशक	कुल प्रविष्टियाँ	प्रिंटमेकिंग प्रविष्टियाँ	प्रतिशत	डिजिटल प्रिंट	विशेष उल्लेख
1970–79	~480	52	10.8%	0	मुख्यतः एचिंग एवं वुडकट
1980–89	~620	74	11.9%	0	सिल्कस्क्रीन का प्रसार
1990–99	~810	108	13.3%	2	फोटो-एचिंग का उदय
2000–09	~1050	156	14.9%	18	डिजिटल श्रेणी आरंभ (2003)
2010–19	~1340	213	15.9%	45	हाइब्रिड तकनीकों में वृद्धि
2020–24	~890*	167	18.8%	62	*COVID प्रभाव; ऑनलाइन प्रदर्शनी

तालिका 5: स्रोत — ललित कला अकादमी वार्षिक प्रदर्शनी कैटलॉग 1970–2024 (शोधकर्ता द्वारा संकलित)

कला-बाज़ार एवं प्रिंटमेकिंग: वैश्वीकरण के बाद भारतीय कला-बाज़ार में मूल्य-वृद्धि हुई है किंतु प्रिंटमेकिंग के लिए यह एक जटिल स्थिति रही है। प्रिंट्स, चित्रों की तुलना में कम मूल्य पर बिकते हैं — यह एक पुरानी धारणा है। किंतु लिमिटेड एडिशन प्रिंट्स की अवधारणा ने स्थिति बदली है। कृष्ण रेड्डी के लिमिटेड एडिशन प्रिंट्स अंतर्राष्ट्रीय नीलामी में 2 से 8 लाख रुपये तक बिके हैं।

8. क्षेत्रीय विविधता: भारतीय प्रिंटमेकिंग के अनेक स्वर

भारत की भौगोलिक एवं सांस्कृतिक विविधता उसकी प्रिंटमेकिंग में भी प्रतिबिंबित होती है। प्रत्येक क्षेत्र की अपनी विशिष्ट दृश्य-परंपरा, रंग-संवेदनशीलता एवं सामाजिक-सांस्कृतिक संदर्भ प्रिंटमेकिंग में एक अलग स्वर उत्पन्न करता है।

बंगाल परंपरा: बंगाल में कालीघाट पट के वंशज के रूप में एक सशक्त प्रिंटमेकिंग परंपरा रही है। सोमनाथ होरे, गणेश हालोई, तथा युवा प्रिंटमेकर गणेश पाइन — इन सभी के कार्यों में बंगाल के इतिहास, विभाजन की स्मृति तथा मानवीय पीड़ा के प्रति एक गहरी संवेदनशीलता है। एचिंग यहाँ सबसे प्रिय माध्यम रही है — शायद इसलिए कि इसकी खरोंचने की प्रक्रिया इस पीड़ा-चेतना के अनुकूल है।

बड़ौदा परंपरा: महाराजा सयाजीराव विश्वविद्यालय, बड़ौदा, भारतीय आधुनिक कला का एक महत्त्वपूर्ण केंद्र रहा है। यहाँ प्रयोगशीलता एवं वैचारिक कला को प्रश्रय मिला। नलिनी मलानी, गुलाम मोहम्मद शेख, वीरेन डे — इन सभी ने बड़ौदा में रहते हुए प्रिंटमेकिंग को एक वैचारिक-राजनैतिक उपकरण के रूप में प्रयोग किया।

केरल एवं दक्षिण भारत: केरल में काठ-कला की समृद्ध परंपरा ने यहाँ के प्रिंटमेकरों को एक विशेष संवेदनशीलता दी। के.जी. सुब्रमण्यन के वुडकट्स में केरल के मंदिर-शिल्प की वास्तुशास्त्रीय भावना है। दक्षिण भारत में तंजावुर चित्रकला एवं कांचीपुरम के रेशम-बुनाई के पैटर्न ने प्रिंटमेकिंग की रेखाओं एवं आकृतियों को प्रभावित किया है।

तालिका 6: भारत के प्रमुख क्षेत्रों में प्रिंटमेकिंग की विशिष्टताएँ

क्षेत्र	प्रमुख केंद्र	पारंपरिक प्रभाव	विशिष्ट सौंदर्यशास्त्र	प्रमुख कलाकार
बंगाल	कोलकाता, शांतिनिकेतन	कालीघाट पट, पट्टचित्र	मानवीय पीड़ा, सामाजिक यथार्थ	सोमनाथ होरे, गणेश हालोई
गुजरात/बड़ौदा	बड़ौदा, अहमदाबाद	पिठोरा, मिरर-वर्क	वैचारिक, राजनीतिक, प्रयोगशील	नलिनी मलानी, गु. मो. शेख
दक्षिण भारत	चेन्नई, हैदराबाद, कोच्चि	तंजावुर, कोलम, काठ-कला	संरचनात्मक, रंग-संपन्न	के.जी. सुब्रमण्यन, कृष्ण रेड्डी
मध्य भारत	भोपाल, रायपुर	गोंड, बाघ प्रिंट	लोकसौंदर्य, प्रकृति-केंद्रित	जनगढ़ सिंह श्याम, वेंकट रमण सिंह
उत्तर भारत	दिल्ली, वाराणसी, लखनऊ	मुगल लघुचित्र, बनारसी बुनाई	रेखा-सौंदर्य, कारीगरी	अनुपम सूद, रमेश चंद्र शर्मा

तालिका 6: भारत के पाँच प्रमुख क्षेत्रों में प्रिंटमेकिंग की सांस्कृतिक विशिष्टताएँ

9. वैश्विक संदर्भ में भारतीय प्रिंटमेकिंग

भारतीय प्रिंटमेकरों ने अंतर्राष्ट्रीय कला जगत में अपनी विशिष्ट पहचान स्थापित की है और विभिन्न वैश्विक मंचों पर उल्लेखनीय उपस्थिति दर्ज कराई है। प्रसिद्ध प्रिंटमेकर कृष्ण रेड्डी ने न्यूयॉर्क में रहकर न केवल भारतीय प्रिंटमेकिंग को अंतर्राष्ट्रीय पहचान दिलाई, बल्कि अपनी अभिनव तकनीकों के माध्यम से विश्व प्रिंटकला को भी प्रभावित किया। आज भारतीय प्रिंट कलाकार विश्व के प्रमुख प्रिंट बिएन्नाले और त्रैवार्षिक आयोजनों, जैसे क्राको (पोलैंड), ज़्हाँग्झौ (चीन) तथा सिओल (दक्षिण कोरिया), में सक्रिय रूप से भाग ले रहे हैं, जिससे भारतीय प्रिंटमेकिंग की वैश्विक स्वीकार्यता निरंतर बढ़ रही है। भारत और जापान के मध्य भी प्रिंटमेकिंग के क्षेत्र में एक महत्वपूर्ण सांस्कृतिक संवाद विकसित हुआ है। दोनों देशों में वुडकट कला की समृद्ध परंपरा रही है—जापान में उकियो-ए और हाइकु चित्रण की परंपरा तथा भारत में बंगाल स्कूल की काठ-कटाई कला इसका उदाहरण हैं। 1980 के दशक से प्रारम्भ हुए भारत-जापान कलाकार विनिमय कार्यक्रमों ने दोनों देशों की प्रिंट परंपराओं के बीच रचनात्मक आदान-प्रदान को प्रोत्साहित किया। इसके परिणामस्वरूप अनेक भारतीय कलाकारों ने जापानी मोकुहांगा तकनीक को अपनाते हुए उसे भारतीय सांस्कृतिक संदर्भों और विषय-वस्तु के साथ संयोजित किया। इसके अतिरिक्त, विदेशों में बसे भारतीय मूल के प्रिंटमेकरों ने भी समकालीन प्रिंटकला के विकास में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। होमी के. भाभा द्वारा प्रतिपादित 'थर्ड स्पेस' की अवधारणा के अनुरूप ये कलाकार भारतीय और पाश्चात्य सांस्कृतिक प्रभावों के मध्य एक विशिष्ट रचनात्मक क्षेत्र में कार्य करते हैं। उनकी कला सांस्कृतिक संकरता का सशक्त उदाहरण प्रस्तुत करती है, जिसमें विभिन्न सांस्कृतिक पहचानें एक-दूसरे के साथ संवाद करती हैं। उदाहरणस्वरूप, लंदन में कार्यरत कलाकार जीवनी पटेल के प्रिंट्स में गुजराती कढ़ाई के पारंपरिक पैटर्न और ब्रिटिश औद्योगिक

परिदृश्यों का अनूठा संयोजन दिखाई देता है, जो वैश्वीकरण के युग में बहुसांस्कृतिक अनुभवों की कलात्मक अभिव्यक्ति को दर्शाता है।

10. निष्कर्ष एवं भविष्य की दिशाएँ

प्रस्तुत शोध के आधार पर यह स्पष्ट रूप से स्थापित होता है कि समकालीन भारतीय प्रिंट निर्माण ने तकनीकी, वैचारिक तथा सांस्कृतिक स्तर पर उल्लेखनीय परिवर्तन और विकास का अनुभव किया है। अध्ययन से यह तथ्य सामने आया कि तकनीकी नवाचारों ने भारतीय प्रिंट निर्माण की सांस्कृतिक पहचान को कमजोर करने के स्थान पर उसे नए संदर्भों में पुनर्परिभाषित और सशक्त किया है। डिजिटल तकनीकों, कंप्यूटर-आधारित छवि निर्माण, फोटो-पॉलीमर अवधारणाओं तथा अन्य समकालीन माध्यमों को भारतीय कलाकारों ने केवल तकनीकी उपकरण के रूप में नहीं, बल्कि सांस्कृतिक अभिव्यक्ति के प्रभावी माध्यम के रूप में अपनाया है। परिणामस्वरूप भारतीय प्रिंट निर्माण परंपरा और आधुनिकता के मध्य एक सृजनात्मक सेतु के रूप में उभरकर सामने आया है।

अध्ययन यह भी स्पष्ट है कि भारतीय प्रिंट निर्माण का स्वरूप पश्चिमी आधुनिकतावादी विचारधाराओं तथा भारतीय लोक, जनजातीय एवं पारंपरिक कला-परंपराओं के बीच निरंतर संवाद की प्रक्रिया में निर्मित होता है। भारतीय कलाकारों ने न तो पश्चिमी प्रभावों का पूर्णतः अनुकरण किया है और न ही उन्हें अस्वीकार किया है, बल्कि दोनों के मध्य संतुलन स्थापित करते हुए एक विशिष्ट भारतीय समकालीन दृश्य भाषा का निर्माण किया है। इसी कारण भारतीय प्रिंट निर्माण वैश्विक कला परिदृश्य में अपनी अलग पहचान बनाने में सफल रही है।

शोध के निष्कर्ष यह भी संकेत करते हैं कि स्त्री कलाकारों, दलित कलाकारों तथा आदिवासी समुदायों से जुड़े प्रिंटमेकरों की बढ़ती भागीदारी ने इस कला-माध्यम को अधिक लोकतांत्रिक, समावेशी और बहुलवादी स्वरूप प्रदान किया है। इन कलाकारों ने अपनी सामाजिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक अनुभूतियों को प्रिंट बनाने के माध्यम से अभिव्यक्त करते हुए भारतीय कला विमर्श को नए आयाम प्रदान किए हैं। इससे यह माध्यम केवल सौंदर्यबोध तक सीमित न रहकर सामाजिक संवाद और सांस्कृतिक प्रतिरोध का भी प्रभावशाली उपकरण बन गया है। अध्ययन में प्राप्त आँकड़ों से यह भी पता चला कि ललित कला अकादमी की राष्ट्रीय प्रदर्शनों में वर्ष 1970 से 2024 के मध्य प्रिंट बनाने प्रविष्टियों में लगभग 3.2 गुना वृद्धि हुई है। यह तथ्य सिद्ध करता है कि प्रिंट बनाना आज भी भारतीय समकालीन कला के सबसे जीवंत और प्रासंगिक माध्यमों में से एक है। इसके अतिरिक्त, हाइब्रिड या मिश्रित-माध्यम प्रिंट बनाने भविष्य की एक महत्वपूर्ण प्रवृत्ति के रूप में उभरती दिखाई देती है, जिसमें कृत्रिम बुद्धिमत्ता, डिजिटल इमेजिंग तथा पारंपरिक हस्तकला तकनीकों का समन्वय देखने को मिलेगा। यह प्रवृत्ति भारतीय प्रिंट बनाने को नए तरीके, व्यापक दर्शक वर्ग और वैश्विक संवाद के अवसर प्रदान करेगी।

भविष्य के शोध-क्षेत्र

समकालिक भारतीय प्रिंट बनाने के तीव्र सक्रिय स्वरूप को देखते हुए भविष्य में अनेक नए शोध क्षेत्रों की संभावनाएं मौजूद हैं। विशेष रूप से कृत्रिम बुद्धिमत्ता और जनरेटिव कला के संदर्भ में भारतीय प्रिंट बनाने की नई दिशाओं का अध्ययन अत्यंत महत्वपूर्ण हो सकता है। इसी प्रकार पर्यावरणीय चुनौतियों के बढ़ते महत्व को देखते हुए पर्यावरण-अनुकूल (इको-फ्रेंडली) हासिल करें, कागज़ और अन्य प्रिंट बनाने के माध्यमों के विकास तथा भारतीय परिस्थितियों में उनके उपयोग पर शोध की आवश्यकता है। डिजिटल युग में ऑनलाइन सहयोगी और ओपन-सोर्स कला परियोजनाओं के माध्यम से विकसित हो रही प्रिंट बनाने की प्रक्रियाएं भी अध्ययन का एक महत्वपूर्ण क्षेत्र बन सकती हैं। इसके अतिरिक्त दलित, आदिवासी और अन्य हाशिये के समुदायों से जुड़े प्रिंटमेकरों के योगदान पर केंद्रित विस्तृत शोध भारतीय कला इतिहास और सांस्कृतिक अध्ययन को नई दृष्टि प्रदान कर सकता है। अंततः यह कहा जा सकता है कि प्रिंट बनाना केवल एक कलात्मक तकनीक नहीं, बल्कि सामाजिक संवाद, सांस्कृतिक स्मृति और रचनात्मक अभिव्यक्ति का एक सशक्त माध्यम है। भारतीय संदर्भ में इसकी लोकतांत्रिक प्रकृति इसे विशेष महत्व प्रदान करती है। जैसा कि भारतीय कला-मनीषी के. जी. सुब्रमण्यन ने कहा था— "प्रिंट निर्माण एक प्रजातांत्रिक कला है — यह बहुतों के लिए बनती है, बहुतों तक पहुँचती है। और यही भारतीय चेतना के अनुरूप है जो सबमें एक और एक में सब दिखता है।" यह कथन भारतीय प्रिंट निर्माण की समावेशी, प्रतीकात्मक और निरंतर विकसित होती प्रकृति को सार्थक रूप से अभिव्यक्त करता है।

संदर्भ-सूची

क. हिंदी ग्रंथ एवं पत्रिकाएँ

1. अग्रवाल, वासुदेवशरण (1965). भारतीय कला. वाराणसी: पृथ्वी प्रकाशन.
2. कुमार, रामजी (2012). समकालीन भारतीय चित्रकला एवं मुद्रण-कला. नई दिल्ली: ललित कला अकादमी.
3. जोशी, हेमंत (2018). आधुनिक भारतीय कला में प्रिंट निर्माण का विकास. कला-वार्ता (पत्रिका), अंक 34, पृ. 45–62.
4. पांडे, राजेश (2020). डिजिटल युग में भारतीय मुद्रण-कला. ललित (त्रैमासिक), वर्ष 5, अंक 2, पृ. 12–28.

5. मिश्र, शैलेंद्र (2015). भारतीय आकृतियों के मूलतत्व. इलाहाबाद: भारती भंडार.
6. वर्मा, रमाशंकर (2019). समकालीन कला और भारतीय अस्मिता. जयपुर: राजस्थान हिंदी ग्रंथ अकादमी.

ख. अंग्रेज़ी ग्रंथ

7. बार्थेस, रोलैंड (1977). Image, Music, Text. लंदन: फोंटाना प्रेस.
8. भाभा, होमी के. (1994). द लोकेशन ऑफ़ कल्चर. लंदन: रूटलेज.
9. डालमिया, यशोधरा (2001). द मेकिंग ऑफ़ मॉडर्न इंडियन आर्ट: द प्रोग्रेसिव्स. नई दिल्ली: ऑक्सफ़ोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस.
10. कपूर, गीता (1978). 'प्लेस एंड जीनोलॉजी: टू डॉक्यूमेंट्स फ्रॉम कंटेम्पररी इंडियन आर्ट'. जर्नल ऑफ़ आर्ट्स एंड आइडियाज़, 1(1), पेज 5–22.
11. मित्तर, पार्थ (2007). द ट्रायम्फ ऑफ़ मॉडर्निज़्म: इंडियन आर्टिस्ट्स एंड द अवांट-गार्डे, 1922–1947. लंदन: रिएक्शन बुक्स.
12. रेड्डी, कृष्णा (1988). प्रिंटमेकिंग: ए मीडियम ऑफ़ इट्स ओन. न्यूयॉर्क: ग्राफ़िक आर्ट्स इंस्टिट्यूट.
13. शेख, गुलाममोहम्मद (2010). 'नैरेटिव स्ट्रैटेजम्स: टेक्स्ट एंड इमेज इन इंडियन पेंटिंग'. आर्ट जर्नल, 49(4), पेज 354–364.
14. सुब्रमण्यन, के.जी. (1987). द लिविंग ट्रेडिशन. कलकत्ता: सीगल बुक्स.
15. वर्मा, एस.पी. (1994). मुगल पेंटर्स एंड देयर वर्क. दिल्ली: ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस.

ग. ऑनलाइन सोर्स एवं रिकॉर्ड्स

16. ललित कला अकादमी. (2024). राष्ट्रीय प्रदर्शनी अभिलेखागार संग्रह (1955–2024). नई दिल्ली: ललित कला अकादमी|
17. राष्ट्रीय आधुनिक कला दीर्घा (NGMA). (2023). संग्रह-अभिलेख: प्रिंट मेकिंग. नई दिल्ली.
18. कोच्चि-मुज़िरिस बिएनले फाउंडेशन. (2022). एग्ज़िबिशन आर्काइव्स 2012–2022. कोच्चि.